अफ़गानिस्तान में आखिर क्या होना चाहिए ?

अजीत साही

इसमें दो राय नहीं कि तालिबान का इतिहास और विचारधारा हिंसक है. हमारे तमाम भारतीय बहन और भाई, हिंदू और मुसलमान, आप दोनों जो उसके खिलाफ़ लिख रहे हैं मैं आपकी सोच और संवेदना की दिल से इज़्ज़त करता हूँ. लेकिन साथ ही मैं सच में आपसे समझना चाहता हूँ कि आपके विचार से अफ़ग़ानिस्तान में आख़िर क्या होना चाहिए था.

क्या अमेरिका को वहाँ और रुकना चाहिए था? इसके बावजूद कि अमेरिका एक आक्रांता था, जिसने पूरे अफ़ग़ानिस्तान में कत्लेआम करके ऐसा आतंक फैलाया कि करोड़ों लोग उससे नफ़रत करने लगे थे, उसे वहाँ क़ाबिज़ रहते रहना चाहिए था तालिबान को रोकने के लिए? अमेरिका तो रुकना नहीं चाह रहा था. पैसे उसके खर्च हुए आपके नहीं. सैनिक उसके मरे आपके नहीं. फिर आख़िर क्या संभावना बननी चाहिए थी आपके हिसाब से?

आप कह रहे हैं कि तालिबान को सत्ता में नहीं आना चाहिए था. चलिए मान लिया. तो फिर आपके हिसाब से अमेरिका के जाने पर किसे राज करना चाहिए था? अशरफ़ ग़नी की सरकार तो पूरी तरह लचर और भ्रष्ट थी. बल्कि सरकार ही फ़र्ज़ी थी क्योंकि उसका चुनाव ही फ़र्ज़ी था. तो जनता के बीच जब उसकी वैधता ही नहीं थी तो वो सरकार कैसे टिकी रहती? क्या आपने ख़बरें नहीं पढ़ी थीं कि अफ़ग़ान सेना को खाने का राशन नहीं मिल रहा था? पूरी पगार नहीं मिल रही थी? कि अशरफ़ ग़नी और उसके आसपास लोग अरबों डॉलर खा चुके थे? ये सब आपको मंज़ूर था? ऐसी सरकार का प्रशासन पर कुछ भी प्रभाव या दबाव रहा होगा? आपको क्या लगता है?

दरअसल बात ये है कि अशरफ़ ग़नी की सरकार की पहले ही कोई नहीं सुन रहा था. काबुल के आसपास छोड़ कर और दो-तीन शहर छोड़ कर वैसे भी अलग-अलग सूबों में अलग-अलग स्थानीय मिलिशिया का प्रभाव था. अमेरिका के जाने पर अशरफ़ ग़नी की सरकार का और भी अधिक लचर हो जाना निश्चित था. फिर क्या होता? पूरे देश में गृहयुद्ध छिड़ जाता. हज़ारों-हज़ार लोग मारे जाते. क्या वो आपको मंज़ूर था? उन हज़ारों लोगों में औरतें भी होतीं, बच्चे भी होते. हज़ारों परिवार बेघर हो जाते। लाखों बच्चे अनाथ हो जाते. हज़ारों लड़कियों के साथ दुष्कर्म होता। वो सब आपको मंज़ूर था? स्कूल बंद हो जाते। धंधा ठप हो जाता. लूटपाट होती। ये सब ठीक होता?

कुछ हालात ऐसे होते हैं जिनके लिए अंग्रेज़ी का जुमला है there are no good answers so you look for the least bad answer. आप बताइए, क्या लीस्ट बैड आंसर होता आपके हिसाब से अफ़ग़ानिस्तान के लिए आज के हालात में?

आप कह सकते हैं कि जो बातें मैंने ऊपर लिखी हैं वो तो तालिबान के रहते भी हो सकती हैं. बिलकुल सही बात है. ज़रूर हो सकती हैं. लेकिन पिछले एक हफ़्ते में हुई हैं क्या? ये सही है कि पूरे अफ़ग़ानिस्तान में महिलाएँ घबराई हुई हैं। उनका भय बिलकुल समझ आता है. लेकिन तालिबान नहीं होता अभी और सरकार गिर चुकी होती और गृहयुद्ध चल रहा होता तो वो महिलाएँ हंस-खेल रही होतीं? तालिबान नहीं होता और गृहयुद्ध होता तो क्या सैकड़ों अफ़ग़ान अमेरिकी विमान पर चढ़ कर मर नहीं रहे होते? भाग नहीं रहे होते? अगर आप थोड़ा भी पढ़े-लिखे हैं तो आपको याद होगा कि 2003 में जब अमेरिका ने ईराक़ पर हमला किया था तो पहले दो महीनों में पूरे देश में भयानक अराजकता फैल गई थी क्योंकि अमेरिका ने सोचा ही नहीं था कि सद्दाम के भगाने पर शासन कौन चलाएगा. आज भी ईराक़ में उसके दुष्परिणाम ज़ाहिर हैं।

देखिए, एक बुनियादी बात समझिए. किसी भी मुल्क में, समाज में बाहर से आए आक्रांता के ख़िलाफ़ उस समाज की पहली लड़ाई होती है। ये अफ़सोस की बात है कि न आपको अमेरिका का अफ़ग़ानिस्तान पर क़ब्ज़ा बुरा लगता है और न ही आपको मालूम है कि जितना अत्याचार और जितनी हिंसा अमेरिका ने किया उसका एक-चौथाई भी तालिबान ने नहीं किया। अमेरिका ने घर-घर घुस-घुस कर आठ-आठ साल के लड़कों की हत्या करवाई है। हवाई बम गिराए हैं। कार्पेट बांबिंग की है। टैंक से गोलीबारी की है। बेगुनाह लोगों को महीनों बंद करके यातना दी है। उनके ऊपर पेशाब किया है. उनकी उँगली काटते थे। सैनिकों को कहते थे कि प्रैक्टिस के लिए सिविलियन को मारो. आप चाहते हैं कि जिन्होंने अपना सब कुछ खोया है, वो अपना दर्द, अपमान सब भूल जाएँ और अमेरिका को सपोर्ट करते रहें?

तालिबान गुड आंसर नहीं है. ये समझने के लिए पीएचडी की ज़रूरत नहीं है. लेकिन आज के हालात में अब तक वही लीस्ट बैंड आंसर है। अब तालिबान कैसे हटेगा? तो अगर रूस, चीन, अमेरिका, पाकिस्तान ने अफ़ग़ानिस्तान में अपना गंदा खेल नहीं जारी रखा तो अफ़ग़ान लोगों को मौक़ा मिलेगा कि वो ख़ुद अपने को धीरे-धीरे मज़बूत करें और अपने हक़ूक़ के लिए लोकतांत्रिक लड़ाई लड़े. इसमें वक़्त लग सकता है और लगेगा भी. दस साल. बीस साल. लेकिन इसी समाज की महिलाओं में, श्रमिकों में, युवाओं से असली लोकतंत्र का बीज फूटेगा. अमेरिका के क़ब्ज़े में मिली आज़ादी वैसी ही आज़ादी थी जैसी की ब्रिटिश काल में भारतीयों को मिली आज़ादी थी। अगर आपको लगता है कि पराधीनता में दोयम दर्जे का नागरिक बनने में ही ख़ुशी है तो फिर आप गुलाम मानसिकता के हैं. लिबरल और प्रोग्रेसिव तो बिलकुल ही नहीं हैं.

पिछले एक हफ़्ते में जो हमने तालिबान को देखा है वो पच्चीस साल पहले हमने तालिबान में नहीं देखा था। हमने कई-कई समाजों में देखा है कि परिस्थितियाँ बदलती हैं तो किरदार भी बदलते हैं। जीसस, मुहम्मद, बुद्ध, गाँधी सबकी शिक्षा यही है कि हर इंसान बदलाव के काबिल है. और इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा है।

असली बात ये है कि लोकतंत्र कोई बाहर से आकर नहीं थोप सकता। स्वाभिमान विदेशी नहीं पैदा कर सकता। यूएन और अमेरिका अफ़ग़ानिस्तान को तालिबान से आज़ादी नहीं दिला सकता। अफ़ग़ानिस्तान के लोगों को ख़ुद मज़बूत होकर अपनी लड़ाई लड़नी होगी।

हम ह्यूमेन राइट्स का वही पाठ पढ़ते हैं जो साम्राज्यवादी हमें पढ़ाते हैं

रिजवान रहमान

अमेरिका इसमें माहिर है. उसने अफगानिस्तान को रौंद कर भी दुनिया भर के लोगों से खुद को व्हाइट वॉश करवा लिया. और दिलचस्प है कि हम तालिबान को गाली देने में अमेरिकन साम्राज्यवाद की सहलाते रहे. मानवाधिकार हनन की आशंका के बीच अफगानिस्तान को 20 साल तक रौंदे जाने को दरकिनार कर गए.

तालिबान का इतिहास डरावना है. महिला-अल्पसंख्यक पर जुल्म ढ़ाए हैं. उनका कत्ल किया गया, उन्हें घर की चारदीवारी में कैद कर दिया. लेकिन पिछले 20 साल में अमेरिका ने जो किया, हमें नजर नहीं आ रहा है. 2001 के बाद से अमेरिकन एयर स्ट्राइक में 50 हजार से अधिक आम अफगानी की हुई मौत "अच्छे दिन" लग रहा है. या शायद उन आम अफगानी की मौत को भी तालिबानी में गिन लिया गया.

यूएन के मुताबिक 2005 से 2019 के बीच अमेरिकन एयरस्ट्राइक में 26000 से अधिक बच्चों की जान चली गई. और पिछले 5 सालों में करीब 1600 बच्चे हर साल मारे गए हैं. 2017 के बाद से अफगानियों की मौत में 330 फीसदी की बढ़ोतरी हुई है.

लेकिन हम इस पर सवाल नहीं करेंगे. क्योंकि हमें लत है गर्व करने की. हमें मानवाधिकार हनन की ऐसी घटनाएं कश्मीर से लेकर उत्तर-पूर्व और झारखंड से लेकर छत्तीसगढ़ में भी नहीं दिखती. फिर अमेरिका द्वारा किया गया ह्यूमेन राइट्स वायलेशन कहां से दिखेगा.

किसान आंदोलन और राकेश टिकैत !

राकेश पांडेय

किसान आंदोलन में एक बड़ा नाम बन चुके भारतीय किसान यूनियन के प्रवक्ता "राकेश टिकैत" को लेकर बिना किसी संदर्भ के आपत्तिजनक टिप्पणी आ जाती हैं। उस टिप्पणी पर मैं कोई प्रतिक्रिया नहीं देना चाहता पर राकेश टिकैत को लेकर कुछ जरूर कहना चाहता हूँ।

आज राकेश टिकैत मोदी सरकार और योगी सरकार के सामने एक बड़ी चुनौती बने दीख रहे हैं। राकेश टिकैत का कोई आपराधिक इतिहास नहीं है। हाँ, वे किसान आंदोलनों के सिलसिले में 44 बार जेल जरूर जा चुके हैं। राकेश टिकैत को आज की सत्ता के समर्थक "जाहिल, गुंडा, बदमाश, लफंगा ..... और कोई कोई तो उन्हें डकैत भी बोल देते हैं। ऐसा वह क्यों बोलते हैं यह वही लोग बेहतर जानते होंगे।

कोई एक बड़ा आंदोलन अपने नायकों को तलाश लेता ही है। देश में चल रहे किसान आंदोलन ने भी अपने नायक तलाश लिये हैं। राकेश टिकैत आज किसान आंदोलन के नायकों में शुमार रखते हैं। जनवरी 21 में योगी की पुलिस ने जब उन पर हाथ डाला तो यह योगी सरकार पर बहुत भारी पड़ गया। राकेश टिकैत के आंसुओं का असर उनके प्रभाव क्षेत्र में इतना व्यापक हुआ कि देर रात में ही हजारों की संख्या में ट्रैक्टर और उन पर लदे किसान सड़को को रौंदते आगे बढ़ने लगे। योगी सरकार को अपने पाँव पीछे खींचने पड़े। प्रशासन माफी की मुद्रा में आ गया।

26 जनवरी 21 को लालकिले के प्रसंग ने किसान आंदोलन को बदनाम करने का एक मौका दिया। ऐसे समय जब किसान नेताओं को कुछ सूझ नहीं रहा था तब राकेश टिकैत ने आगे बढ़कर किसान आंदोलन को बदनाम करने वालों को करारा जबाब दिया।

आज किसान आंदोलन की धुरी बन चुके हैं राकेश टिकैत। वे लखनऊ को दिल्ली बना देने की जब बात करते हैं तो सरकार समर्थकों में बड़ी तिलमिलाहट होती है। आज राकेश टिकैत के लिये उल्टे सीधे बोले जाने वाले शब्द उसी तिलमिलाहट का नतीजा हैं।

यह सच है कि राकेश टिकैत 2007 का विधानसभा चुनाव और 2014 का लोकसभा चुनाव बुरी तरह हार गए थे। एक सच यह भी है कि इस देश मे किसान मजदूर आंदोलन से जुड़े संगठन राजनीति में सफल नहीं हो पाते हैं। राजनीति अंकगणित नहीं है। इसमें दो और दो चार नहीं होते हैं।

पश्चिम उत्तरप्रदेश में मुजफ्फरनगर दंगों से पहले बीजेपी बहुत पीछे थी। इन दंगों ने बीजेपी को एक बड़ी जमीन दे दी। 14 और 14 के बाद बीजेपी यहाँ नम्बर 1 बन गयी। जाट और मुस्लिम अलग अलग क्या हुए बीजेपी की तो लाटरी लग गई।

पर आज हालात बदल चुके हैं। महेंद्र सिंह टिकैत के जमाने में भारतीय किसान यूनियन से जुड़े एक बड़े नाम गुलाम मोहम्मद जौला मुजफ्फरनगर दंगों के बाद अलग हो गए थे, आज वह फिर साथ हैं।

एक महापंचायत के मंच पर गुलाम मोहम्मद जौला भी थे और टिकैत बन्धु भी। गुलाम मोहम्मद जौला खुलकर बोले, कहा कि जाटों ने 2 बड़ी गलतियां कीं। पहली दंगो में मुसलमानों के खिलाफ हुए दूसरी अजीत सिंह को चुनाव हरवा दिया। महापंचायत में इन शब्दों से सन्नाटा छा गया। जाट नेताओं ने गलती महसूस की। जाटों और मुसलमानों के बीच जमी बर्फ पिघल गयी। आज राकेश टिकैत और गुलाम मोहम्मद जौला किसान आंदोलन में साथ है। जाट मुस्लिम खाही आज पट चुकी है।

मेरा यह मानना है कि आंदोलन से जुड़े नेताओं को दबंग नेता की छवि बनानी पड़ती है। उनकी एक "न्यूसेंस वैल्यू" बहुत मायने रखती है। यही न्यूसेंस वैल्यू सफलता की सीढ़ी बनती है। आंदोलन के नेताओं के लिये जाहिल, गुंडा, बदमाश, लफंगा शब्द सत्ता पक्ष की भड़ास ही होते हैं। ऐसा बोलना सत्तापक्ष की हार का परिचायक है।